

अध्याय 1: अर्जुनविषादयोग

जब गांडीवधारी योद्धा के हाथ कांपने लगे | कुल श्लोक: 47

श्रीमद्भगवद्गीता के प्रथम अध्याय का नाम 'अर्जुनविषादयोग' (Arjuna Vishada Yoga) है। सामान्य व्यवहार में 'विषाद' का अर्थ शोक, निराशा, अत्यधिक मानसिक तनाव या अवसाद (Depression) माना जाता है। परंतु सनातन दर्शन की यह अनुपम विशेषता है कि महर्षि वेदव्यास ने इस शोक के साथ 'योग' शब्द को जोड़ा है। जब तक मनुष्य को अपनी बौद्धिक सीमाओं, लाचारी और आंतरिक खोखलेपन का बोध नहीं होता, तब तक उसके भीतर अहंकार रहता है। जब यह अहंकार टूटता है और व्यक्ति अपनी अक्षमता को स्वीकार करके सच्चे गुरु की शरण में जाता है, तब वही विषाद आत्मज्ञान की प्राप्ति का प्रथम सोपान—अर्थात् योग बन जाता है।

अध्याय 1 का केंद्रीय भाव: यह अध्याय किसी दार्शनिक सिद्धांत की स्थापना नहीं करता, बल्कि यह उस वास्तविक मनोवैज्ञानिक टूटन का चित्रण करता है जिससे गुजरकर हर सामान्य मनुष्य अंततः सत्य और समाधान की खोज शुरू करता है।

1. रणभूमि का दृश्य और दुर्योधन का मनोवैज्ञानिक भय

कुरुक्षेत्र की पावन भूमि पर दोनों ओर की सेनाएं व्यूहरचना बनाकर खड़ी थीं। राजा धृतराष्ट्र के प्रश्न के उत्तर में संजय ने आंखों देखा हाल सुनाना आरंभ किया। सर्वप्रथम संजय ने राजा दुर्योधन की मनोदशा का वर्णन किया। दुर्योधन यद्यपि ग्यारह अक्षौहिणी सेना का स्वामी था, फिर भी पांडवों की सात अक्षौहिणी सेना की सुव्यवस्थित व्यूहरचना देखकर वह भीतर से आशंकित हो गया।

दुर्योधन अपने गुरु द्रोणाचार्य के समीप गया। उसने पांडव सेना के प्रमुख महारथियों—धृष्टद्युम्न, भीम, अर्जुन, सात्यकि, चेकितान, काशिराज और कुंतिभोज का नाम गिनाना शुरू किया। इसके बाद उसने अपनी सेना के भीष्म, कर्ण, कृपाचार्य और अश्वत्थामा जैसे अजेय योद्धाओं का उल्लेख किया। दुर्योधन का यह व्यवहार उसकी आंतरिक असुरक्षा को दर्शाता है। जब कोई व्यक्ति अंदर से कमजोर या अधर्म के मार्ग पर होता है, तो विशाल संसाधन होने के बावजूद उसका आत्मविश्वास डगमगाने लगता है।

2. महाशंखों का गर्जन: दोनों पक्षों का शक्ति प्रदर्शन

दुर्योधन के संशय को दूर करने और कौरव सेना में उत्साह भरने के लिए वयोवृद्ध भीष्म पितामह ने सिंहनाद करते हुए अपने शंख को तीव्र वेग से बजाया। इसके तुरंत बाद शंख, नगाड़े, ढोल और नरसिंगे एक साथ बज उठे, जिससे आकाश गूंज उठा। इसके प्रत्युत्तर में पांडव पक्ष की ओर से जो शंखनाद हुआ, उसने कौरवों के हृदयों को विदीर्ण कर दिया:

महारथी का नाम	शंख का नाम	महत्व / प्रतीक
भगवान श्रीकृष्ण	पाञ्चजन्य	परम सत्य और धर्म की अंतिम विजय का उद्घोष
धनंजय (अर्जुन)	देवदत्त	इंद्र द्वारा प्रदत्त दिव्य पराक्रम का प्रतीक
भीमसेन	पौण्ड्र	महाबली का भयंकर और विनाशकारी नाद
युधिष्ठिर	अनन्तविजय	धर्मराज की सत्यनिष्ठ विजय का संकल्प
नकुल एवं सहदेव	सुघोष और मणिपुष्पक	अनुशासन और मर्यादा का सुंदर समन्वय

3. 'सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय' - अर्जुन की प्रार्थना

सेनाएं आमने-सामने थीं और बाण चलने ही वाले थे। ठीक उसी समय कपिध्वज रथ पर सवार अर्जुन ने अपने सारथि योगेश्वर श्रीकृष्ण से कहा:

सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ।
यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान् ॥1.21॥

अर्थ: अर्जुन ने कहा — हे अच्युत! मेरे रथ को दोनों सेनाओं के मध्य में ले जाकर खड़ा कीजिए, ताकि मैं युद्ध की इच्छा से उपस्थित इन विपक्षियों को अच्छी तरह देख सकूँ कि मुझे किन-किन के साथ युद्ध करना है।

भगवान् श्रीकृष्ण ने रथ को दोनों सेनाओं के बीच में लाकर ठीक भीष्म, द्रोण और संसार के समस्त राजाओं के सामने खड़ा कर दिया। श्रीकृष्ण ने मुस्कराते हुए केवल एक वाक्य कहा— "पार्थ! इन एकत्र हुए कुरुवंशियों को देखो।" श्रीकृष्ण जानते थे कि अर्जुन के अंतर्मन में छिपे मोह और आसक्ति को बाहर निकालने के लिए उसे परिजनों के प्रत्यक्ष दर्शन कराना अनिवार्य था।

4. अर्जुन का शारीरिक और मानसिक पतन (Panic Attack)

जैसे ही अर्जुन ने सामने दृष्टि डाली, उन्हें कोई शत्रु नहीं दिखा। उन्हें दिखे अपने पूज्य पितामह भीष्म जिन्होंने बचपन में उन्हें गोद में खिलाया था, गुरु द्रोणाचार्य जिनसे उन्होंने अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा पाई थी, ससुर, साले, मामा, भाई और पौत्र। अपने ही परिजनों को संहार के कगार पर देखकर अर्जुन का गांडीवधारी स्वरूप अचानक एक भयभीत, अशक्त मनुष्य में बदल गया।

सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति ।
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते ॥1.29॥
गाण्डीवं संसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते ।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः ॥1.30॥

अर्थ: अर्जुन बोले — हे कृष्ण! युद्धभूमि में उपस्थित इन स्वजनों को देखकर मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं, मुख सूख रहा है, शरीर में कंपन हो रहा है और रोंगटे खड़े हो रहे हैं। हाथ से गांडीव धनुष फिसल रहा है, त्वचा जल रही है और मेरा मन भ्रमित हो रहा है; मैं खड़ा रहने में भी असमर्थ हो रहा हूँ।

श्लोक 29 और 30 को यदि चिकित्सा या आधुनिक मनोविज्ञान (Psychology) के नजरिए से देखें, तो यह किसी **Acute Anxiety Attack** या **Severe Panic Attack** के सटीक लक्षण हैं। जब कोई व्यक्ति अपनी क्षमता से परे किसी अत्यधिक भावनात्मक तनाव का सामना करता है, तो उसका नर्वस सिस्टम इसी प्रकार प्रतिक्रिया देता है।

5. अर्जुन के युद्ध-त्याग के 4 दार्शनिक तर्क

अर्जुन कायर नहीं थे; उन्होंने निवातकवच जैसे असुरों को अकेले पराजित किया था और विराट नगर में अकेले पूरी कौरव सेना को मूर्छित कर दिया था। परंतु यहाँ समस्या भय नहीं, बल्कि 'धर्म और मोह' का भयंकर भ्रम था। अर्जुन ने श्रीकृष्ण के समक्ष युद्ध न करने के लिए चार मुख्य तर्क दिए:

- स्वजन-मोह और करुणा (Misplaced Compassion):** अर्जुन ने कहा कि जिन परिजनों के सुख, सम्मान और ऐश्वर्य के लिए राज्य की कामना की जाती है, यदि वे ही युद्ध में प्राण गंवा बैठेंगे, तो खून से सने उस राज्य और भोग का क्या मूल्य रह जाएगा?

- पाप का भय (Moral Guilt):** अर्जुन ने तर्क दिया कि यद्यपि लोभ से अंधे हुए कौरव कुल के नाश और मित्रों के द्रोह का दोष नहीं देख पा रहे हैं, परंतु हम तो समझदार हैं। हमें इस महापाप से पीछे हट जाना चाहिए, अन्यथा हमें घोर नरक का भागी बनना पड़ेगा।
- कुलक्षय और सामाजिक व्यवस्था का विनाश (Societal Breakdown):** अर्जुन ने कहा कि युद्ध में कुल के श्रेष्ठ पुरुषों का संहार होने से कुल की सनातन धर्म-परंपराएं नष्ट हो जाती हैं। कुलधर्म नष्ट होने से अधर्म बढ़ता है, स्त्रियों का सतीत्व दूषित होता है, वर्णसंकर उत्पन्न होते हैं और पितरों का पिंडदान रुकने से पूरा समाज पतन के गर्त में गिर जाता है।
- पलायन को संन्यास मानना (Escapism disguised as Renunciation):** अर्जुन को लगा कि क्षत्रिय धर्म के अनुसार युद्ध करने से बेहतर है कि वे भिक्षा मांगकर जीवन यापन कर लें। वे अपने कर्तव्य से भागने को 'त्याग और अहिंसा' का चोला पहनाने लगे।

6. प्रथम अध्याय का समापन: गांडीव का परित्याग

शोक और मोह से पूरी तरह पराभूत होकर अर्जुन ने अपने अंतिम निर्णय की घोषणा कर दी। प्रथम अध्याय के अंतिम श्लोक (1.47) में संजय कहते हैं:

**एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत् ।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः ॥1.47॥**

अर्थ: संजय बोले — रणभूमि में शोक से अत्यंत व्याकुल चित्त वाले अर्जुन इस प्रकार कहकर, बाण सहित अपने धनुष को त्यागकर रथ के पिछले भाग में बैठ गए।

इस प्रकार पहला अध्याय अर्जुन के पूर्ण आत्मसमर्पण, अश्रुपात और लाचारी के साथ समाप्त होता है। इस पूरे अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण एक भी शब्द नहीं बोलते; वे एक शांत, धैर्यवान चिकित्सक और मनोवैज्ञानिक की तरह अर्जुन के मन का सारा जहर, भ्रम और तर्क बाहर निकलने देते हैं।

7. आधुनिक जीवन और युवाओं के लिए अध्याय 1 की सीख

कुरुक्षेत्र केवल हरियाणा का एक भौगोलिक स्थान नहीं है; हमारे मन का हर दिन एक कुरुक्षेत्र है। जब भी हमें जीवन में कठोर निर्णय लेने होते हैं, अर्जुन की तरह हमारे भीतर भी संघर्ष शुरू होता है:

- भावना बनाम कर्तव्य (Emotion vs Duty):** कार्यस्थल, परिवार या समाज में कई बार हमें सही और निष्पक्ष निर्णय लेने पड़ते हैं, जहाँ अपने प्रियजनों के स्वार्थ आड़े आते हैं। अर्जुन का विषाद हमें सिखाता है कि मोह के वशीभूत होकर लिया गया निर्णय कभी धर्म नहीं हो सकता।
- तनाव की स्वीकारोक्ति (Acknowledging Weakness):** जब तक अर्जुन लड़ते रहे कि "मैं सब संभाल लूंगा", तब तक वे उलझते गए। जब उन्होंने स्वीकार किया कि "मुझसे नहीं हो रहा", तब वे शिष्य बनने के योग्य हुए। अपनी कमजोरी को स्वीकार करना ही उपचार की पहली सीढ़ी है।
- अधूरे ज्ञान का भ्रम:** अर्जुन ने कुलक्षय और धर्म के बड़े-बड़े तर्क दिए, लेकिन वे सभी तर्क मोह से प्रेरित थे। अधूरा ज्ञान मनुष्य को कर्तव्य से भटकाने के लिए सुंदर बहाने गढ़ने में बहुत माहिर होता है।

8. अक्सर पूछे जाने वाले सवाल (FAQs)

प्र. प्रथम अध्याय में श्रीकृष्ण मौन क्यों रहे?

उत्तर: श्रीकृष्ण एक आदर्श शिक्षक और मनोवैज्ञानिक हैं। जब कोई व्यक्ति तीव्र क्रोध, भय या अवसाद में होता है, तो उसे सलाह देना व्यर्थ होता है। श्रीकृष्ण ने पहले अर्जुन के भीतर दबे सारे संशय, पीड़ा और तर्कों को पूरी तरह बाहर आने दिया।

प्र. क्या अर्जुन का युद्ध से पीछे हटना सही था?

उत्तर: साधारण दृष्टि से अर्जुन की बात दया और अहिंसा लगती है, लेकिन एक क्षत्रिय और राष्ट्र के संरक्षक के नाते अधर्म और अन्याय के सामने हथियार डालना कायरता और समाज को अपराधियों के हवाले छोड़ना था। श्रीकृष्ण अगले अध्याय में इसी बात को स्पष्ट करते हैं।

॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे । हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥

Website: soniapanghal.com